Year 13 : Issue 1, January-June 2025 I S S N : 0975-6256

ललिता कवि-भारती

(LALITĀ KAVI-BHĀRATĪ)

U. G. C. CARE LISTED JOURNAL

पीयर-रिव्यू षाण्मासिकी शोध-पत्रिका

Peer-reviewed Biannual Research Journal

संरक्षकाः

जगद्गुरुश्रीमद्रामानुजाचार्यस्वामिश्रीवासुदेवाचार्य 'विद्याभास्कर' महाराजाः

प्रधानसम्पादकः

प्रोफेसर कमलाकान्तत्रिपाठी

सम्पादकः

डॉ० संजीवशर्मा

सहायकसम्पादकः

डॉ० त्रिलोचनप्रधानः

किशोर-विद्या-निकेतनम्

बी-2/236-ए-1, (भारतीय स्टेट बैंक अस्सी शाखा)

भदैनी, वाराणसी-221001

Published by:
Kishor Vidya Niketan
B-2/236-A-1, Bhadaini, Varanasi-221001
www.kishorvidyaniketan.com

I S S N : **0975-6256**

UGC Care Listed Journal from January_2024
(Subject : Arts and Humanities)

Year 13 : Issue 1, January-June 2025

Price: 800-00

Address for Correspondence:
Dr. Santosh Dwivedi
Kishor Vidya Niketan
B-2/236-A-1, Bhadaini, Varanasi- 221001
email : lalitakavi@gmail.com
website: www.kishorvidyaniketan.com

All Right Reserved with Publisher
(*The author is solely responsible for the content of the manuscript.*)

Printed at:
SJRG Services and Suppliers
Varanasi

विषयानुक्रमणिका

सम्पादकीय

1. **पञ्चाननतर्करत्नभट्टाचार्यविरचिते अमरमङ्गले अङ्कमुखविमर्शः**
   श्यामसुन्दरसर्दारः 1-4
2. **शाक्तोपनिषत्सु मुक्तितत्त्वविमर्शनम्**
   गोरांगो बिस्वास, मधुसूदन दास 5-10
3. **मृच्छकटिके कलाविद्याविषयिणी चर्चा**
   मिठुन-नस्करः 11-16
4. **मनुयाज्ञवल्क्यस्मृतिग्रन्थयोः मानवीयमूल्यबोधस्य परिशीलनम्**
   पङ्कज कुमार माहाना 17-21
5. **संस्कृतवाङ्मये नीतिशास्त्रस्य उद्भवः क्रमविकाशश्च**
   लोकेश मण्डल 22-27
6. **स्वप्नवासवदत्ते अग्निकाण्डचिन्तनम्**
   सदानन्दविश्वासः 28-30
7. **भावेभ्यो रसोत्पत्तेः सिद्धान्तः**
   सोमनाथ चट्टोपाध्यायः 31-35
8. **धर्मशास्त्रीय अनुसन्धान के बहुविध क्षेत्रः सर्वेक्षण आधारित विश्लेषण**
   गोल्डन कुमार, आरुषि निगम, अवधेश प्रताप सिंह एवं सुभाष चन्द्र 36-45
9. **आयुष्मान भारत (प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना) का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**
   दशरथ कुमार शर्मा 46-50
10. **नई सदी की कविता : संवेदना के नए आयाम**
    कुमुद कला मेहता 51-57
11. **उच्च शिक्षा में अध्ययनरत विवाहित महिलाओं के शिक्षा के अनुभवः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**
    प्रवीण कुमार, नीलम पटेल 58-67
12. **ओडिशा में 5T मॉडलः शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए ओडिशा सरकार द्वारा एक अभिनव प्रयास**
    हरिहर नाग, प्रह्लाद माझी 68-76
13. **भोजन का अधिकार जनहित याचिका एवं राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2013: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**
    रवि जोशी 77-88

धर्मशास्त्रीय अनुसन्धान के बहुविध क्षेत्रः सर्वेक्षण आधारित विश्लेषण

गोल्डन कुमार[१], आरुषि निगम,[२] अवधेश प्रताप सिंह[३] एवं सुभाष चन्द्र[४]
शोधकर्ता
शंस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली- ११०००७
Email:schandra@sanskrit.du.ac.in

सारांश- *संस्कृत वाङ्मय में धर्मशास्त्र का विशिष्ट और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये ग्रन्थ समाज के आर्थिक, नैतिक और व्यवहारिक पहलुओं का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करते हैं। धर्मशास्त्रों में सामाजिक संरचना, प्रशासनिक एवं आर्थिक व्यवस्थाएँ, नैतिक सिद्धान्त, चरणबद्ध योजनाएँ और उनके विभिन्न घटकों का गहन विश्लेषण किया गया है। सामाजिक सुधारों और नियमों का पालन सुनिश्चित करके ही समाज का संतुलित विकास संभव है। प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति की मूल झलक वेदों में दिखाई देती है। भारतीय समाज की जड़ें वैदिक काल से जुड़ी हुई हैं, और समाज निर्माण की अवधारणा भी इसी काल में विकसित हुई थी। उस समय का सामाजिक प्रबंधन कार्यों और उत्तरदायित्वों के व्यवस्थित विभाजन पर आधारित था। यद्यपि समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित था, परन्तु धर्मशास्त्र काल में इसे संवैधानिक स्वरूप और लिखित रूप प्रदान किया गया। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, नारदस्मृति, अर्थशास्त्र और धर्मसूत्र जैसे धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों पर व्यापक रूप से शोध कार्य हुए हैं। आदिकाल से ही विद्वानों ने धर्मशास्त्रों की मूल अवधारणाओं पर आधारित शोध और अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। संस्कृत विद्वानों के साथ-साथ इतिहासकारों, राजनीतिशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, दार्शनिकों और न्यायशास्त्र के विद्वानों ने धर्मशास्त्र के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया है। धर्मशास्त्र के प्रमुख विषयों पर तुलनात्मक, आलोचनात्मक, वर्णनात्मक, सैद्धांतिक और गुणात्मक शोध किए गए हैं। इस शोधपत्र का उद्देश्य धर्मशास्त्र से सम्बंधित पूर्व शोध कार्यों का संक्षिप्त और आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है। पूर्व में किए गए शोध के गहन अध्ययन से भावी शोधकर्ताओं को उचित दिशा और संदर्भ मिलेंगे। यह शोधपत्र अंत:विषयक अनुसंधान को प्रेरित और प्रोत्साहित करते हुए नए शोध की संभावनाओं को जन्म देगा।*

शब्द कुंजी- *धर्मशास्त्र, सामाजिक संरचना, आर्थिक, वर्णाश्रम व्यवस्था, न्यायिक, राजनैतिक, पर्यावरण, सर्वेक्षण ।*

परिचय एवं पृष्ठभूमि-

धर्मशास्त्र भारतीय समाज और संस्कृति का एक प्रमुख आधारस्तम्भ है, जो धार्मिक और आध्यात्मिक अनुशासन के साथ-साथ जीवन के विभिन्न विषयों जैसे सामाजिक संगठन, नैतिकता, कानून, और मानव कर्तव्यों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है। ''धर्मशास्त्र'' का शाब्दिक अर्थ है ''आचार-नियम और उनके सिद्धान्तों का पालन करना'' (काणे १९३०)। इन ग्रन्थों में निहित नियम और सिद्धान्त समाज में संतुलन और न्याय की स्थापना के उद्देश्य से बनाए गए थे। धर्मशास्त्र, संस्कृत ग्रन्थों में एक विशिष्ट ग्रन्थ हैं, जिसमें धर्म (कर्तव्य और उचित आचरण), सामाजिक अवधारणाएँ, वर्णाश्रम, परिवार, सभ्यता-संस्कृति, व्यक्तिगत दिनचर्या और अनुष्ठान प्रक्रियाओं पर व्यापक निर्देश शामिल हैं। उदाहरणस्वरूप,

मनुस्मृति और आपस्तम्बधर्मसूत्र जैसे गन्थों में सामाजिक नियमों का वर्णन किया गया है, जिनके आधार पर राजा का कर्तव्य था कि वह समाज का कुशल प्रबंधन करे। नागरिकों के कर्तव्यों और दायित्वों को ''धर्म'' के रूप में परिभाषित किया गया था। प्राचीन भारतीय सभ्यता की जड़ें वेदों में हैं। वेदों में समाज की संरचना, कानून, और सामाजिक प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है। धर्मशास्त्र काल में इन्हें व्यवस्थित और लिखित स्वरूप प्रदान किया गया। इसमें वर्णव्यवस्था और आश्रम व्यवस्था जैसे सामाजिक विषयों पर विशेष ध्यान दिया गया, जिनके माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गो और व्यक्तियों के कार्यों और उत्तरदायित्वों का निर्धारण किया गया।

धर्मशास्त्र में प्रमुख ग्रन्थों में मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, नारदस्मृति, पराशर स्मृति, और कात्यायन स्मृति का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त कौटिल्य का अर्थशास्त्र, शुक्रनीतिसार और कामन्दकीयनीतिसार जैसे नीति ग्रन्थ भी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। इन ग्रन्थों में विषयों को मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया गया है: आचार, व्यवहार, और प्रायश्चित। ये शीर्षक समाज के विभिन्न स्वरूप जैसे व्यक्तिगत आचरण, सामाजिक न्याय, और निवारण प्रक्रियाओं पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। वर्णव्यवस्था के अन्तर्गत समाज को चार प्रमुख वर्गों: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र में विभाजित किया गया, और आश्रम व्यवस्था के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को चार चरणों: ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास में बांटा गया। यह व्यवस्था समाज के सन्तुलित विकास और व्यक्तियों के अनुशासन हेतु बनाई गई थी। धर्मशास्त्र का आधार वेद हैं और इनकी उत्पत्ति वैदिक युग में मानी जाती है। वेदों में विवाह, वर्ण व्यवस्था, आश्रमधर्म, उत्तराधिकार, स्त्रियों की स्थिति, दंड-व्यवस्था, सप्तांग-सिद्धान्त, संस्कार और सामाजिक तथा न्यायिक प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है। धर्मशास्त्रों में इन विषयों को विस्तार से प्रस्तुत किया गया, जिससे ये ज्ञान व्यापक रूप से प्रसारित हुआ। इन ग्रन्थों में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, संस्कार, दैनिक और नियमित कार्य, राजधर्म, वर्णधर्म और तपस्या जैसे विषयों पर प्रकाश डाला गया है, जो समाज और व्यक्ति के समग्र विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। भारतीय समाज में धर्मशास्त्र का महत्त्व सदियों से बना हुआ है। यह समाज के आदर्शों, नियमों, और मूल्यों की समझ को गहन बनाने का माध्यम है। अत: धर्मशास्त्र का अध्ययन भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक सिद्धान्तों को समझने के लिए एक आवश्यक विधि है।

उद्देश्य-

इस शोधपत्र का प्राथमिक उद्देश्य भारत में हुए धर्मशास्त्र से सम्बन्धित शोध कार्य का आलोचनात्मक सर्वेक्षण करना है, जो पूर्व कार्यों के गहन अध्ययन और आलोचनात्मक मूल्यांकन को बढ़ावा देता है। यह सर्वेक्षण उचित और सटीक सन्दर्भ प्रदान करेगा तथा अन्तर-अनुशासनात्मक शोध के लिए प्रेरणा भी देगा। यह व्यवस्थित चर्चा अगामी अनुसन्धान को प्रेरित करने, विभिन्न दृष्टिकोणों की प्रस्तुति करने और पूर्व में शोधित अवधारणाओं के भीतर नए आयामों को उद्धृत करने का काम करती है। शोधकर्ताओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक अनुसन्धान और इससे सम्बन्धित क्षेत्रों के नए आयामों का पता लगाने के लिए प्रेरित करके यह सर्वेक्षण भविष्य के शोधकर्ताओं को उचित मार्गदर्शन प्रदान करेगा और संभावित रूप से प्राचीन भारतीय व्यवस्था के अन्दर नवीन अनुसन्धान को बढ़ावा देगा।

सामग्री संकलन एवं शोध प्रविधि-

यह शोधपत्र प्राचीन तथा आधुनिक स्तरों पर सामाजिक, न्यायिक एवं आर्थिक पहलुओं तथा प्रमुख सामाजिक संस्थाओं जैसे वर्णव्यवस्था, आश्रम, संस्कार आदि विषयों पर शोधकार्यों के अध्ययन का एक व्यापक सर्वेक्षण प्रस्तुत करता है। कतिपय आयामों को समझने के लिए शैक्षिक पुस्तकें, शोधपत्र और विद्वानों की व्याख्याओं जैसे द्वितीयक स्रोतों का भी अध्ययन किया गया है। धर्मशास्त्र से सम्बन्धित

शोधकार्य का संकलन एवं उसकी समीक्षा पर भी ध्यान दिया गया। इस शोधकार्य के संग्रह हेतु विभिन्न विश्वविद्यालय के ई-पुस्तकालय, केन्द्रीय संस्कृत संस्थान द्वारा संगृहीत संस्कृत अनुसन्धान एवं कई अन्तर्जालीय स्रोत का प्रयोग किया गया जैसे गूगल बुक, ई-शोधगंगा, गूगल स्कॉलर, रिसर्च गेट, संस्कृत रिसर्च डेटाबेस दिल्ली विश्ववद्यालय, अन्य विश्वविद्यालयों की वेबसाइटें, संस्कृत अनुसन्धानकोशः (२००१-२०१५), संस्कृत विश्वविद्यालय, भोपाल आदि का पठन किया गया है। इस शोध में वर्णनात्मक, तुलनात्मक, आलोचनात्मक, सैद्धान्तिक, विश्लेषणात्मक एवं गुणात्मक अनुसन्धान पद्धतियों का प्रयोग करते हुए द्वितीयक तथा सहायक स्रोतों का अध्ययन किया गया है। ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक दृष्टिकोण को अपनाकर इस शोध को अधिक व्यापक बनाया गया है। इस शोधपत्र के माध्यम से धर्मशास्त्र के व्यापक अर्थों को समझने और भविष्य के शोधों में नए दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

सर्वेक्षण आधारित धर्मशास्त्रीय अनुसन्धान के बहुविध क्षेत्र-

१. संस्कार-जीवन और संस्कारों का घनिष्ठ संबंध प्राचीन भारतीय परम्परा का एक अनिवार्य अंग है। भारतीय समाज में संस्कारों का अत्यधिक महत्त्व है। संस्कार शब्द की व्युत्पत्ति 'सम्' उपसर्ग और 'कृ' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है शुद्धि, परिष्कार और सुधार। आचार्य शबरस्वामी ने संस्कार का अर्थ इस प्रकार बताया है: ''संस्कारो नाम स भवति यस्मिन्जाते पदार्थो भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य'' अर्थात्, संस्कार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई वस्तु या व्यक्ति किसी कार्य के लिए उपयुक्त बनता है। मनु के अनुसार, द्विजातियों में माता-पिता के वीर्य और दोषों को गर्भाधान संस्कार, जातकर्म, चौल और उपनयन के माध्यम से शुद्ध किया जाता है[१]। संस्कारों की संख्या के विषय में धर्मशास्त्रकारों में मतभेद पाया जाता है। आचार्य गौतम ने ४० संस्कारों का उल्लेख किया है, जबकि आचार्य वैखानस ने १८ संस्कारों का वर्णन किया है। अंगिरा ने २५ संस्कार, और व्यास ने १६ संस्कारों की चर्चा की है। वहीं, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति और विष्णुधर्मसूत्र में किसी विशेष संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन उन्होंने गर्भाधान से लेकर अंत्येष्टि तक के संस्कारों की ओर संकेत किया है। मुख्य रूप से, संस्कारों की संख्या सोलह मानी गई है। इस संदर्भ में आधुनिक युग में भी कई शोध कार्य किए गए हैं। इन शोधों में संस्कारों की वैज्ञानिकता और उनकी आधुनिक प्रासंगिकता पर विशेष ध्यान दिया गया है। राजबली पाण्डेय (२००४) ने अपने शोधकार्य में सोलह संस्कारों की वैज्ञानिकता को स्पष्ट किया है और समाज में उनकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला है।

२. वर्णाश्रम व्यवस्था-भारतीय सभ्यता में मानव जीवन को सुव्यवस्थित, सुसंस्कृत और आदर्श बनाने के लिए वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था स्थापित की गई। वर्ण व्यवस्था का उद्गम वैदिक काल में माना जाता है, किन्तु इसका व्यवस्थित विकास मुख्यतः धर्मसूत्र काल में हुआ। लगभग सभी प्रमुख धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में वर्ण व्यवस्था का विस्तार से उल्लेख मिलता है। वर्ण को मुख्य रूप से चार विभागों में विभक्त किया है: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र[२]। इस विभाजन को सभी विद्वानों ने माना है किन्तु यह विभाजन कर्म के आधारित है या जन्म आधारित है इसपर विद्वानों के बीच कतिपय मतभेद देखा जाता है। इस व्यवस्था पर भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने बहुत से शोध कार्य किये हैं। सक्सेना और इन्दोलिया (२०११) ने वर्ण, जाति, और कुल की विशेषताओं, गुणों, और संभावनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। जहां कुछ विद्वानों ने इस व्यवस्था की अति प्रशंसा की वहीं कुछ विद्वानों ने कड़ी आलोचना की है। मेन (१८६१) ने अपनी ग्रन्थ ''Ancient Law'' में जाति व्यवस्था पर भर्त्सना की है। शेरिंग (१८७२) भी अपनी पुस्तक ''Hindu Tribes and Castes'' में वर्ण व्यवस्था की कड़ी आलोचना करते है। सिडनी लो (१९०६) ने अपने ग्रन्थ ''Vision of India'' और मेरिडिथ टाऊन्सेंड (१९०१) अपनी

पुस्तक ''Europe and Aisa'' में इस व्यवस्था का स्तुति गान किये हैं। इसके साथ ही भारतीय विद्वानों ने भी इस व्यवस्था का गुणात्मक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण से शोधकार्य प्रस्तुत किया है। भारतीय समाज में आश्रमव्यवस्था की अपनी अलग विशेषता है। धर्मशास्त्र के अनुसार आश्रम मनुष्य के जीवन की चार अवस्था हैः ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास। धर्मशास्त्र में प्रत्येक अवस्था के कर्तव्य निर्धारित हैं। भारतीय समाज में आश्रम व्यवस्था व्यक्ति की प्रवृत्तियों एवं क्षमताओं के अनुसार जीवन के कर्मों के विभाजन और सन्तुलन की व्यवस्था है। इस व्यवस्था पर कई शोधकार्य हुए हैं, जिनमें इस व्यवस्था की उत्कृष्टता को बताया गया है।

३. विवाह-धर्मशास्त्रों में विवाह प्रणाली सामाजिक, धार्मिक और नैतिक आयामों के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है, जो समाज में पवित्रता और धर्म को बनाए रखने में इसकी भूमिका पर बल देती है। विवाह को सोलह संस्कारों के प्रमुख महत्त्वपूर्ण संस्कारों में से एक माना जाता है, जो किसी व्यक्ति के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण चरण को प्रदर्शित करता है। मनुस्मृति और याज्ञवल्क्य स्मृति जैसे धर्मशास्त्रों में विवाह को आठ प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है, जिनमें ब्राह्म, दैव, प्राजापत्य, गांधर्व, आसुर आदि शामिल हैं, जिनमें धर्म के पालन के कारण ब्राह्म विवाह को सबसे आदर्श माना जाता है। ये ग्रन्थ उपयुक्त जोड़ों की व्यवस्था करने में माता-पिता के कर्तव्यों पर प्रकाश डालते हैं, अनुकूलता (गुण-मिलान), साझा मूल्यों और जाति और सामाजिक मानदंडों के पालन पर जोर देते हैं। धर्मशास्त्रों में विवाह अनुष्ठानों का विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है, जिसमें कन्यादान (दुल्हन को उपहार देना), सप्तपदी (पवित्र अग्नि के चारों ओर सात कदम जो मिलन का प्रतीक है) और लाजाहोम (भुने हुए अनाज का प्रसाद) शामिल हैं, जो वैवाहिक बंधन की पवित्र और अविभाज्य प्रकृति का प्रतीक हैं। ग्रन्थ पति औरपत्नी के बीच आपसी सम्मान, निष्ठा और साहचर्य के महत्त्व पर जोर देते हैं। युगल को घरेलू कर्तव्यों (गृहस्थ धर्म) को पूरा करने में समान भागीदार के रूप में देखते हैं। सामाजिक व्यवस्था और धर्म को बनाए रखने में विवाह की भूमिका पर भी जोर दिया गया है, क्योंकि यह प्रजनन, वंश की निरंतरता (संतति) और भावी पीढियों के पोषण के लिए रुपरेखा प्रदान करता है। प्रदाता और रक्षक के रूप में पति की जिम्मेदारियाँ, और घर के पालन-पोषण के लिए रूपरेखा प्रदान करता है। प्रदाता और रक्षक के रूप में पति की जिम्मेदारियाँ, और घर के पालन-पोषण और संरक्षक के रूप में पत्नी की जिम्मेदारियाँ, पूरक भूमिकाओं और साझा आध्यात्मिक गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित करते हुए विस्तृत रूप से बताई गई हैं। इसके अतिरिक्त, स्त्रीधन (महिलाओं का धन) की अवधारणा वैवाहिक संरचना के भीतर महिलाओं के लिए वित्तीय सुरक्षा और स्वतंत्रता सुनिश्चित करती है।

४. राजनैतिक एवं न्यायिक व्यवस्था-भारतीय राजनीति में धर्मशास्त्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है, जो राज्य की संरचना और प्रशासनिक सिद्धांतों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करता है। धर्मशास्त्र में प्रतिपादित **सप्तांग सिद्धांत** इसका प्रमुख उदाहरण है। धर्मशास्त्र से सम्बन्धित प्रत्येक ग्रन्थ में राज्य के स्वरूप और उसकी संरचना पर प्रकाश डाला गया है। अर्थशास्त्र में राज्य के सात अंग के विषय में इस प्रकार बताया गया हैः स्वामी, अमात्य, जनपद या राष्ट्र, दुर्ग, कोश, दण्ड, मित्र[३]। किन्तु, इन अंगों के क्रम और नामों में भिन्नता देखने को मिलती है। जनपद के लिए जन या राष्ट्र का, दण्ड के लिए बल तथा दुर्ग के लिए पुर का प्रयोग हुआ है। मनु के मतानुसार क्रम एवं नाम इस प्रकार से हैः स्वामी, अमात्य, पुर, राष्ट्र, कोश, दण्ड, सुहृत्[२]। इसीप्रकार धर्मशास्त्र में राजा का कर्तव्य, मन्त्रिपरिषद् की संख्या एवं कर्तव्य आदि का वर्णन प्राप्त होता है जो कि राजनीतिक दृष्टिकोण से देखा गया है। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में न्यायिक प्रशासन के विषय में अत्यधिक जानकारी प्राप्त होती है (Wani 2017). धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में व्यवहारपद का प्रयोग हुआ है।

व्यवहारपद का अर्थ है झगड़े, विवाद या मुकदमे का विषय[४]। मनुस्मृति एवं नारदस्मृति में १८ व्यवहारपद का वर्णन किया गया है, परन्तु अर्थशास्त्र में १६ प्रकार के व्यवहारपद का वर्णन हुआ है। इस १८ व्यवहारपद की चर्चा दो न्यायालय में बतायी गयी है: दिवानी न्यायालय एवं आपराधिक न्यायालय। आचार्य कौटिल्य ने व्यवहारपदों पर निर्णय धर्मस्थ के द्वारा बताया है। इस प्रकार धर्मशास्त्र में प्रतिपादित न्याय व्यवस्था को आधुनिक सन्दर्भ के परिप्रेक्ष्य में बताते हुए बहुत से शोधकार्य किये गये है।

५. आर्थिक प्रबन्धन-धर्मशास्त्र में राज्य की आर्थिक व्यवस्था को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विषय माना गया है। इसके अंतर्गत कर प्रणाली, ऋण व्यवस्था, कोष संग्रहण, व्यापार एवं अन्य आर्थिक आयामों पर गहन विचार किया गया है। आचार्य कौटिल्य ने अर्थ को धर्म एवं काम की तुलना में अधिक प्रधानता दी है[५], उन्होंने धर्म और काम को अर्थ पर निर्भर माना है। किसी भी राज्य को व्यवस्थित रूप से चलाने हेतु कोश का होना अत्यावश्यक है। प्राचीन भारत में आर्थिक प्रबंधन का अन्वेषण पारम्परिक ज्ञान और आधुनिक अनुप्रयोगों के संयोजन पर केंद्रित पुस्तकों तथा शोध पत्रों के माध्यम से निरंतर किया जा रहा है। बासु एवं सेन (२००८) द्वारा लिखित 'प्राचीन भारतीय आर्थिक विचार: आज के लिए प्रासंगिकता' और चमोला (२००७) द्वारा लिखित 'कौटिल्य अर्थशास्त्र और प्रबंधन का विज्ञान' जैसी कृतियों में समकालीन सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों के समाधान हेतु प्राचीन आर्थिक दर्शन की प्रासंगिकता पर बल दिया गया है। देवधर (२०२०) शुक्रनीतिसार पर अपने काम के माध्यम से मध्ययुगीन आर्थिक नीतियों में तल्लीन हैं, किन्तु शर्मा (२०१६) महाभारत और अर्थशास्त्र जैसे मौलिक ग्रन्थों में परिलक्षित कराधान और राजस्व प्रथाओं में अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं। शोमे (२०२१) ने प्राचीन करव्यवस्था को आधुनिक समय अनुसार बताया है। उन्होंने आचार्य कौटिल्य द्वारा व्यवस्थित राज्य में राजा द्वारा लिया जाने वाले कर, शुल्क आदि का वर्णन किया है। इस प्रकार से करव्यवस्था पर कई शोध कार्य हुए है। धर्मशास्त्र में ऋणादान को व्यवहारपद में रखा गया है, इस ऋण व्यवस्था पर बहुत से शोधकार्य हुए हैं जिसमें आधुनिक सन्दर्भ को बताया गया है।

६. सीमा तथा विदेशनीति-धर्मशास्त्र ग्रन्थ शासन के लिए एकव्यापक रूपरेखा प्रदान करते हैं, जो सीमा प्रबंधन और विदेशी संबंधों के नैतिक और रणनीतिक आयामों पर बल देते हैं। राजधर्म, कूटनीति और रक्षा की अवधारणाओं पर मनुस्मृति, शुक्रनीति और अर्थशास्त्र जैसे ग्रन्थों में विस्तार से चर्चा की गई है। ये ग्रन्थ न केवल शासकों के कर्तव्यों को परिभाषित करते हैं बल्कि धर्म का पालन करते हुए शांति और सुरक्षा बनाए रखने की रणनीतियों की रूपरेखा भी बताते हैं। राजा (राजन्) की भूमिका को सीमाओं के रक्षक के रूप में उजागर किया गया है, जो नागरिकों (प्रजा) और राज्य के संसाधनों की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। मनुस्मृति और शुक्रनीति जैसे ग्रन्थों में क्षेत्रीय सीमांकन और सीमाओं की पवित्रता को संबोधित किया गया है, जो किलेबंदी, प्राकृतिक बाधाओं और रक्षात्मक संरचनाओं (दुर्ग-निरूपण) के महत्त्व पर भी जोर देते हैं। क्षेत्रीय विवादों को सुलझाने में निष्पक्षता और आपसी सम्मान पर ध्यान देने के साथ नैतिक विचार सीमा नीतियों को रेखांकित करते हैं। विदेशी संबंधों में, अर्थशास्त्र ने चार गुना कूटनीतिक रणनीतियों (साम, दान, दंड और भेद) को राज्य कला के आवश्यक उपकरणों के रूप में रेखांकित किया है, साथ ही राज्यों को सहयोगी (मित्र), तटस्थ (मध्यम) और शत्रु (अरि) में वर्गीकृत किया है। ये सिद्धांत आपसी विश्वास और धर्म के आधार पर गठबंधन और संधि बनाने पर मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। रक्षा तंत्र भी केंद्रीय हैं, जिसमें ग्रन्थों में नैतिक युद्ध (युद्ध-धर्म) और न्यायपूर्ण युद्ध सिद्धांतों (धर्मयुद्ध) पर जोर दिया गया है, साथ ही आक्रमणों को रोकने के लिए सीमाओं पर गढ़ और सतर्कता की वकालत भी की गई है। इसके अतिरिक्त, धर्मशास्त्र शांतिपूर्ण सह-अस्तित्त्व को बढ़ावा देने के लिए मध्यस्थता और राजनयिक मिशनों के माध्यम से संघर्ष समाधान को प्राथमिकता देते हैं। राजसूय बलिदान

और टिकाऊ विदेशी सम्बन्धों की अवधारणा शासन की दीर्घकालिक दृष्टि को उजागर करती है, व्यक्तिगत नैतिकता (स्वधर्म) को सार्वजनिक कर्तव्य (राजधर्म) के साथ संतुलित करती है। यह प्राचीन ज्ञान समकालीन भू-राजनीतिक मुद्दों के लिए एक मूल्यवान दृष्टिकोण प्रदान करता है, तथा संघर्ष समाधान, गठबंधन निर्माण, तथा न्याय एवं स्थिरता पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति के लिए नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

७. श्रमनीति-धर्मशास्त्र में श्रमिकों के कल्याण एवं श्रमनीति से सम्बन्धित पर्याप्त सामग्री प्राप्त होती है। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों के माध्यम से प्राचीन भारत में व्याप्त श्रम नीतियों को भारतीय श्रम नीतियों की खोज जैसी टिप्पणियों से मेधातिथि, कुल्लूक भट्ट, विज्ञानेश्वर और जूलियस जॉली आदि द्वारा प्रकाशित किया गया है जो श्रम संबंधों और नैतिकता की एक गहरी और संरचित समझ को प्रकट करता है। ये ग्रन्थ न्याय, आर्थिक निष्पक्षता और सामाजिक कल्याण के सिद्धांतों में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं जो प्राचीन भारतीय समाज की श्रम प्रणाली के लिए आधारभूमि प्रदान करते हैं। श्रम कानूनों के प्रति धर्मशास्त्रीय दृष्टिकोण बहुआयामी था, जिसका लक्ष्य न केवल आर्थिक न्याय था बल्कि सामाजिक ताने-बाने के भीतर व्यक्तियों का नैतिक विकास भी था। ये ग्रन्थ नियोक्ताओं और कर्मचारियों दोनों की भूमिकाओं और जिम्मेदारियों की सूक्ष्म समझ को दर्शाते हैं, और आधुनिक श्रम संहिताओं के साथ आश्चर्यजनक समानताओं को भी प्रदान करते हैं। नारदस्मृति कानूनी सुरक्षा उपायों की आवश्यकता को स्वीकार करती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि श्रम अनुबंध न्यायसंगत हों और श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच विवादों का निष्पक्ष समाधान हो। कानूनी हस्तक्षेप का यह सिद्धांत श्रम विवादों को संभालने के लिए न्यायिक और अर्ध-न्यायिक तंत्रों, जैसे श्रम न्यायाधिकरणों पर आधुनिक जोर को दर्शाता है और कार्यस्थल में न्याय के प्रति स्थायी प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

८. चिकित्सा विज्ञान-धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्रतिपादित संस्कारों के अध्ययन एवं आधुनिक स्वास्थ्य सेवा प्रणालियों के एकीकरण के क्षेत्र में विस्तृत शोध कार्य हुआ है। इस दिशा में किए गए अध्ययनों ने एक समृद्ध साहित्य का निर्माण किया है। चक्रपाणि (२०१३) ने स्वर्णप्राशन चिकित्सा की समीक्षा प्रस्तुत की है, जिसमें बाल रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में इसकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया है। इसी प्रकार, कुमार (२०१७) ने बाल चिकित्सा देखभाल में विभिन्न संस्कारों के वैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय महत्त्व पर गहन चर्चा की है, स्वस्थ सन्तान के लिए निवारक उपायों पर विशेष बल देते हुए। संस्कारों पर आयुर्वेदिक दृष्टिकोण भी प्रमुख रहा है। करम और भावना (२०१२) तथा सोमाजी एवं अन्य (२०१४) द्वारा किए गए अध्ययन से अवगत हुआ है कि संस्कारों को करने से किसी सूक्ष्म प्रकार के रोग से निदान हो सकता है एवं वह व्यावहारिक प्रासंगिकता को भी बताता है। उन्होंने विशेषकर बाल चिकित्सा एवं सामान्य स्वास्थ्य सन्दर्भों में शोध किये हैं। स्वामीनाथन (२०१६) ने अपने शोध कार्य में बताया है कि संस्कारों द्वारा शिक्षण एवं पोषण प्राप्त होता है, उन्होंने इस कार्य में वैदिक परम्परा को समकालीन विकासात्मक अन्तर्दृष्टि से जोड़ते हुए बताया है। इसके अतिरिक्त, कपूर (२०१८) ने स्वदेशी स्वास्थ्य प्रणालियों के अन्तर्गत, विकासात्मक मनोविज्ञान एवं पारम्परिक स्वास्थ्य सेवा को सम्मिलित करते हुए बाल देखभाल पर प्रकाश डाला है। तिवारी एवं पाण्डे (२०१३) ने बुढ़ापे के दौरान मानसिक स्वास्थ्य पर भारतीय जीवनशैली के प्रभाव का पता लगाया है, किन्तु रवीश (२०१४) ने स्वस्थ उम्र बढ़ने को बढ़ावा देने वाली सांस्कृतिक प्रथाओं पर चर्चा की है। अन्त में, रामा राव (१९८२) ने आयुर्वेद, योग एवं धर्मशास्त्र को जोड़ते हुए, प्राचीन भारतीय प्रथाओं में स्नान की चिकित्सकीय एवं आनुष्ठानिक भूमिका का विश्लेषण किया है। सामूहिक रूप से, ये अध्ययन संस्कारों के वैज्ञानिक, चिकित्सकीय एवं सांस्कृतिक महत्त्व तथा समग्र स्वास्थ्य सेवा में उनकी स्थायी, प्रासंगिकता को रेखांकित करते हैं।

९. पर्यावरण विज्ञान-प्राचीन भारतीय साहित्य में पर्यावरण जागरूकता पर आधारित मौजूदा शोध विभिन्न प्रकाशित पुस्तकों और जर्नल लेखों के माध्यम से विविध दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। आनंद (२०२०) द्वारा पर्यावरण, वन और जल संसाधन, में प्राकृतिक संसाधनों और मानवीय गतिविधियों के पारस्परिक क्रिया को समझने के लिए एक शैक्षिक ढांचा प्रस्तुत किया गया है, जिसमें सतत प्रबंधन प्रथाओं पर विशेष बल दिया गया है। वहीं कन्नन (n.d.) ने चेन्नई शहर में उत्पन्न ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर किये गए अध्ययन के माध्यम से शहरी पर्यावरणीय चुनौतियों पर एक समकालीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। किन्तु पाध्य एवं अन्य (२००६) के लेख में मनु के पर्यावरण कानून की एक संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत की गई है, जिसमें मनुस्मृति में वर्णित प्राचीन कानूनी संहिताओं को आधुनिक पारिस्थितिक सिद्धान्तों के सन्दर्भ में विश्लेषित किया गया है। इसी प्रकार से, पुष्पंगदन एवं अन्य (१९८७) पर्यावरणीय स्वास्थ्य और स्वच्छता से संबंधित प्राचीन भारत की प्रथाओं का मूल्यांकन करते हैं, जो सामुदायिक कल्याण के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदर्शित करते हैं। अन्त में, राजखोवा (२०२०) मनुस्मृति के पर्यावरण दर्शन का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं, जिसमें पारिस्थितिक जागरूकता को बढ़ावा देने में इसकी प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है। सामूहिक रूप से, ये कार्य समकालीन पर्यावरणीय प्रवचन को आकार देने में प्राचीन भारतीय ग्रन्थों के स्थायी महत्त्व को रेखांकित करते हैं।

१०. डिजिटलीकरण-आधुनिक समय में डिजिटलीकरण का विकास बहुत ही तेजी से हो रहा है। वर्तमान समय के शोध कार्य में धर्मशास्त्र के ग्रन्थों को डिजिटलीकरण एवं उसकी अवधारणाओं का खनन किया जाता है। आज के समय में ऑनलाइन पुस्तकों का प्रचार-प्रसार बहुत ही तीव्र गति से हो रहा है। साथ ही, उनके मुख्य सिद्धान्तों को खोजने में कम समय लगे, इसके लिए संस्कृत ग्रन्थों की डिजिटल उपलब्धता पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। मणी (२००८) ने अपने शोध कार्य में महाभारत के सिद्धान्तों के एक ऑनलाइन अनुक्रमण बनाये हैं। इस प्रकार अन्जू (२०२१) ने अपने शोध कार्य में सांख्य एवं योग दर्शन के पारिभाषिक शब्दों का एक वेबतन्त्र बनाया है। संस्कृत कम्प्यूटेशनल भाषाविज्ञान अध्ययन का एक अंत:विषय उभरता हुआ क्षेत्र है, जहाँ भाषाई विश्लेषण के लिए कम्प्यूटेशनल निदर्श, तर्क, तकनीक और सिद्धान्तों को संस्कृत भाषा पर लागू किया जाता है। यह क्षेत्र वर्तमान समय में नियमित रूप से बढ़ती स्वचालन क्षमता के साथ आगे बढ़ रहा है और संज्ञानात्मक विज्ञान और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में व्यावहारिक अनुप्रयोगों पर भी ध्यान केंद्रित करना प्रारंभ कर दिया है। इस प्रकार, यह एक निरंतर विकसित होने वाला क्षेत्र है और संस्कृत एम्बेडेड सीएल में वर्तमान रुझान भारतीय विरासत ग्रन्थों के लिए इलेक्ट्रॉनिक अनुक्रमण, डिजिटल पाठक, डिजिटल खोज और संस्कृत-आधारित ग्रन्थों का अध्ययन और अन्वेषण करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक शैक्षिक उपकरण हैं। डॉ. धवल पटेल ने संस्कृत भाषा प्रौद्योगिकी के लिए एक वेब पोर्टल विकसित किया है, जिसमें उच्चारण निर्मापक (उच्चारण जनरेटर), कोश खोज (थिसॉरस/शब्दकोश या लेक्सिकल सर्च) आदि जैसे उपकरण शामिल हैं। इसी तरह, हैदराबाद विश्वविद्यालय के संस्कृत अध्ययन विभाग ने प्रो. अंबा कुलकर्णी के मार्गदर्शन में अमरकोश और धातुवृत्तियों नामक लेक्सिकल टूल विकसित किए। इस केंद्र ने संस्कृत ग्रन्थों के लिए एक खोज इंजन भी विकसित किया है जिसके माध्यम से संस्कृत ग्रन्थों के शब्दों को खोजा जा सकता है। जेएनयू द्वारा एक समान, ऑनलाइन अनुक्रमण और खोज उपकरण विकसित किया गया है, जिसे ऑनलाइन बहुभाषी अमरकोश प्रणाली कहा जाता है जो पुरातन ग्रन्थ अमरकोश पर आधारित है, जो अमरसिंह को दिया गया संस्कृत शब्दकोष है। इसे RDBMS तकनीकों का उपयोग करके विकसित किया गया है। अमरकोश के पाठ में पाए जाने वाले किसी भी शब्द को इस प्रणाली का उपयोग करके ऑनलाइन खोजा जा सकता है। दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग ने ऑनलाइन उपस्कर विकसित किए हैं और संस्कृत के लिए एक

ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म बनाया है। इसमें संस्कृत व्याकरण जैसे सुबन्त, सन्धि, स्त्री प्रत्यय, दर्शन जैसे सांख्य–योग, पुराण, धर्मशास्त्र जैसे कई उपकरण विकसित किए हैं।

निष्कर्ष–

धर्मशास्त्र में प्राचीन भारत के समाज को दर्शाया गया है, उसमें विषयों की एक विस्तृत शृंखला को समाहित किया गया है। प्राचीन भारत के समाज के गहन अध्ययन के लिए धर्मशास्त्र ग्रन्थों के व्यापक अध्ययन की आवश्यकता होती है। धर्मशास्त्रीय अवधारणाओं के अध्ययन संस्कृत विद्वानों के अतिरिक्त इतिहासकार, समाजशास्त्री, राजनीतिक वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, कानूनी विशेषज्ञ, आयुर्वेद के आचार्य, प्रबन्धन विशेषज्ञ, विभिन्न क्षेत्रों में पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान को समाहित करते हैं, उन्हें प्रसिद्ध महत्त्व प्रदान करते हैं। आधुनिक समय में भारत में ही नहीं अपितु विश्व में भी धर्मशास्त्र की प्रत्येक अवधारणा पर शोध कार्य किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, शोधकार्यों में प्रस्तुत पद्धतियों के विषय को भी शोधकर्ताओं के द्वारा मूल्यांकन करने में मार्गदर्शन प्रदान करेंगा और प्राचीन भारत के सन्दर्भ में धर्मशास्त्र के क्षेत्र में शोध के उद्भव का मार्ग प्रशस्त करने के लिए यह शोध पत्र है।

उपरोक्त सभी तथ्यों के अध्ययन एवं विश्लेषण से निष्कर्षतया यह कहा जा सकता है कि पूर्व में हुए शोध कार्य के सार के रूप में प्रस्तुत है। इसमें धर्मशास्त्र के समाजिक तत्त्व की विशेषताओं, राजनीतिक व्यवस्थाओं, आर्थिक अवयवों एवं न्यायिक प्रक्रियाओं की समीक्षा का अध्ययन किया गया है। इसमें धर्मशास्त्र के आयामों पर बहुत से शोध कार्यों को लिया गया है जिसकी समीक्षा को प्रस्तुत किया गया है। इसमें धर्मशास्त्र से सम्बन्धित शोध कार्य जैसे पुस्तक, शोधप्रबन्ध, लघु शोध प्रबन्ध, शोध पत्र, जर्नल आदि में हुआ है। धर्मसूत्रों में आर्थिक चिन्तन, काव्य में धर्मशास्त्र के अवयव, धर्मशास्त्र में न्यायप्रक्रिया, समाजिक व्यवस्था, आर्थिक विमर्श आदि पर हुए शोध एवं उसकी समीक्षा प्रस्तुत की गई है। इन अवयवों पर केवल भारतीय शोधकर्त्ता नहीं, अपितु पाश्चात्य विद्वानों ने भी शोधकार्य किये है।

संदर्भ–

१. गार्भैर्होमैर्जातकर्मचूडामौञ्जीनिबन्धनैः। बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपसृज्यते।

२. चत्वारो वर्णा ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः।

३. स्वाम्यमात्यजनदुर्गकोशदण्डमित्राणि प्रकृतयः।

४. स्वाम्यमात्यौ पुरं राष्ट्रं कोशदण्डौ सुहत्तथा।

५. विनार्थेऽव सन्देहे हरणं उच्यते। नानासन्देहहरणाद् व्यवहार इति स्मृतः।

६. अर्थ एव प्रधान इति कौटिल्यः।

सन्दर्भ–

1. Anand, A. Unit-18 Enveronment, Forests and Water Resources. Indira Gandhi National Open University, 2020.
2. Anju. SÂßkhya-YogadarSana ke paribhasika Sabdon ka visleSanatmaka adhyayana evam veba tamtra ka vikasa. PhD dissertion, University of Delhi, 2021.
3. Basu, R. L., and R. K. Sen. Ancient Indian Economic Thought: Relevance for Today. Rawat Publications, 2008.

4. Chakrapany, S. ‘‘A Review on Swarnaprashan: Gold Licking, a Child Immunity Enhancer Therapy.’’ Global Journal of Research on Medicinal plants & Indigenous Medicine, vo1. 2, no. 11, 2013, pp. 752-761.
5. Chamola, S. D. Kautilya Arthshastra and the Science of Management: Relevance for the Contemporary Society. Hope India Publications, 2007.
6. Chander, R. ‘‘ArthSastra: A Replica of Social Dynamism in Ancient India.’’ International Journal of Innovative Research and Advanced Studies, vol. 2, no, 4, 2015, pp. 78-83.
7. Deodhar, S. Y. Shukranitisara: An Early Medieval Treatise on Econocic Policy. Indian Institute of Management Ahmedabad, Research and Publication Department, 2020.
8. Kane, P. V. History of Dharmasastra. Vols. 1-5, Bhandarkar Oriental Research Institute, 1930.
9. Kannan, R. Dinesh. ‘‘An Analysis of Solid waste Management in Chennai City.’’ TEJAS Thiagarajar College Journal, vol. 2, no. 1, pp. 56-62.
10. Kapur, M. “Childcare in the Indigenous Health Systems in India from the Perspectives of Developmental and Health Psychology.’’ Psychosocial Interventions for Health and Well-Being, 2018, pp. 125-136.
11. Karam, S., and Bhavna, V. ‘‘An Approach to Samskara in Ayurveda.’’ International Journal of Ayurvedic Medicine, vo1. 3, no. 3, 2012.
12. Kumar, S. ‘‘A Critical Appraisal on Various Samskaras with Their Scientific and Medical Importance in Pediatric Age Group.’’ International Journal of Ayurveda and Pharma Research, vo1. 5, no. 5, 2017.
13. Kumar, S. ‘‘Preventive Measures for a Healthy Progeny and Child in Pediatrics Practices.’’ AYUSHDHARA: An International Journal of Research in AYUSH and Allied Systems, vo1. 3, no. 3, 2017, pp. 698-701.
14. Low, Sidney. Vision of India. Smith, Elder & Co., 1906.
15. Maine, H. S. Ancient Law: Its Connection with the Early History of Society, and Its Relation to Modern Ideas. John Murray, 1861.
16. Mani, D. Online Index of Adiparva in Mahabharata. PhD dissertation, Jawaharlal Nehru University, 2008.
17. Pandey, R. Hindu Samskara. Chaukhamba Vidyabhavan, 2014.
18. Padhy, S., Dash, S. K., and Mohapatra, R. ‘‘Environmental Laws of Manu: A Concise Ravies.’’ Journal of Human Ecology, vo1. 19, no. 1, 2006, pp. 1-12.
19. Pushpangadan, P., Jyoti Sharma, and Jeet Kaur. ‘‘Environmental Health and Hygiene in Ancient India: An Appraisal.’’Ancient Science of Life, vo1. 7, no. 1, 1987, pp. 1-6.
20. Rajkhowa, B. ‘‘Reflection of Environmental Awareness in the Manusmriti: A Study.’’ AIOC-50th Sessino, Nagpur, Jan. 2020
21. Rame Rao, B. ‘‘Bath in Ayurveda, Yoga and Dharmashastra.’’ Bull Indian Inst Hist Med Hyderabad, vo1. 12, nos. 1-4, 1982, pp. 13-21.
22. Raveesh, B. N. ‘‘Cultural Practices in India Towards Healthy Ageing.’’ Journal of Geriatric Care and Research, vol. 1, no. 2, 2014.
23. Sharma, S. K. Taxation and Revenue Collection in Ancient India: Reflections on Mahabharata, Manusmriti, Arthasastra and Shukranitisar. Cambridge Scholars Publishing, 2016.
24. Sherring, M. A. Hindu Tribes and Caste. Trubner & Co., 1872.
25. Shome, P., and Shome, P. ‘‘Taxation in Ancient India.’’ Taxation History, Theory, Law and Administration, 2021, pp. 15-27.
26. Somaji, L. D., Ganeshrao, B. N., and Shripatrao, H. S. ‘‘Clinical Evaluation of Suvarnaprashana Samskara.’’ International Journal of Ayurvedic Medicine, vo1. 5, no. 1, 2014, pp. 133-138.

27. Swaminathan, M. ‘‘Samskaras: The Vedic Perspective of Nutrition and Learning.’’ Essen-Bildung-Konsum, 2016, pp. 169-176.
28. Tiwari, S. c., and Pandey, N. M. ‘‘The Indian Concepts of Lifestyle and Mental Health in Old Age.’’ Indian Journal of Psychiatry, vo1. 55, suppl. 2, 2013, p. S288
29. Tiwari, S. K., and Sharma, R. K. Tribal History of Central India: Tribal Communities of the Modern Age. Aryan Books International, 2002.
30. Townsend, M. Asia and Europe. Archibald Constable & Co Ltb, 1901.
31. Wani, S. A. ‘‘Concept of Legal and Judicial Administration in Ancient India.’’ International Journal in Management & Social Science, vo1. 5, no. 7, 2017, pp. 248-253.

♦♦